केंद्रीय कारागृह
जयपुर

विपश्यना का प्रथम जेल शिविर

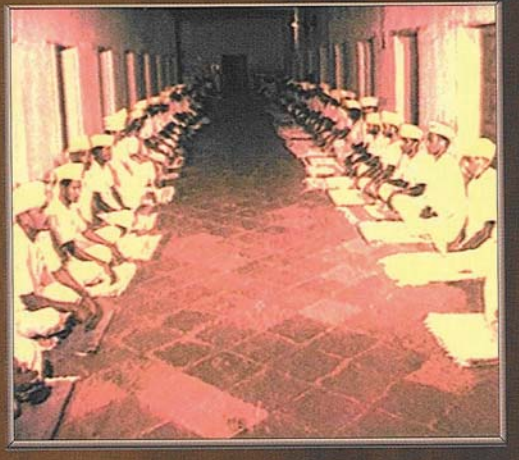

विपश्यना विशोधन विन्यास

केंद्रीय कारागृह जयपुर

(विपश्यना का प्रथम जेल शिविर)

विषयानुक्रमणिका

प्रस्तावना .....[i]

'विपश्यना' का परिचय .....[viii]

पट १ .....**१**

जेलों में विपश्यना - एक ऐतिहासिक पर्यवेक्षण
(श्री रामसिंहः भूतपूर्व गृह सचिव, राजस्थान) १

पट २ .....**६**

विपश्यना साधना शिविर (श्री गणेश नारायण व्यास) ६
अपराधी और विपश्यना (श्री भगवान सिंह साईवाल) ११
जेलें, अपराधी और विपश्यना (श्री हरिश्चंद्र विद्यालंकार) १५

पट ३ .....**२३**

शिविरार्थियों के अनुभव २३

पट ४ .....**३६**

बुद्धवाणी सार्थक हुई ३६

पट ५ .....**५१**

मंगल-मृत्यु ५१

पट ६ .....**५५**

मंगल-धर्म ५५

पट ७ .....**५८**

शिविर के चित्र ५८

विपश्यना साहित्य **६२**

विपश्यना साधना के केंद्र **६६**

प्रस्तावना

तिपिटक के संयुत्तनिकाय में वर्णन आता है कि एक समय कोसलनरेश प्रसेनजित ने बहुत से नागरिकों को बंदी बना लिया था। इनमें से किन्हीं को रस्सियों से बांध रखा था, किन्हीं को बेड़ियां डलवा रखी थीं और किन्हीं को लोहे की जंजीरों से जकड़ रखा था।

कालांतर में भिक्षुगण ने भगवान बुद्ध को इसकी जानकारी देते हुए कहा - 'भंते! कोसलनरेश प्रसेनजित ने बहुत से नागरिकों को बंदी बना रखा है। किन्हीं को रस्सियों से बांध रखा है, किन्हीं को बेड़ियां डलवा रखी हैं और किन्हीं को लोहे की जंजीरों से जकड़ रखा है।' इस पर भगवान ने कहा कि पंडित जन लोहे, लकड़ी अथवा घास-फूस से बनी हुई वस्तुओं को 'दृढ़ बंधन' नहीं कहते। 'दृढ़ बंधन' कहते हैं 'आसक्तियों' को, और दूसरों से रखी जाने वाली 'अपेक्षाओं' को। यही होते हैं वे बंधन जो ले जाते हैं अधःपतन की ओर, होते भी हैं सूक्ष्म और खुलते भी हैं बड़ी कठिनाई से!

❦❦❦

इसी बात को कल्याणमित्र श्री सत्यनारायण गोयन्काजी भी जेलों में लगने वाले विपश्यना शिविरों के समय समझाते हैं इस प्रकार –

सभी कैदी हैं

"वास्तविकता यह है कि जेल की चहारदिवारी के भीतर रहने वाले ही दुखियारे कैदी नहीं हैं। जेल की दीवारों के बाहर रहने वाले भी दुखियारे कैदी ही हैं। अपने-अपने मनोविकारों की कैद में सब गिरफ्त हैं और दुःखी हैं। कैद की अवधि पूरी होने पर जेल के कैदी छूट जाते हैं, परंतु जेल के भीतर और बाहर रहने वाले इन करोड़ों-अरबों बंदियों को अपने-अपने विकारों की कैद से मुक्त हो सकना अत्यंत कठिन है। यह कैद न जाने कितने जन्मों से सब को बंदी बनाये हुए है और न जाने कितने जन्मों तक बंदी बनाये रखेगी। इस कैद की यंत्रणा असीम है, अगाध है, असह्य है।

मनोविकारों के दूषित स्वभाव-शिकंजे से छुटकारा पाये बिना इस कैद से छुटकारा पाना नामुमकिन है, इस यंत्रणा से छुटकारा पाना असंभव है।

"बाहरी दुनिया में कोई व्यक्ति अपराध करता हुआ पकड़ा जाय अथवा निरपराध होने पर भी संदेह में पकड़ा जाय तो उसे चहारदिवारी के भीतर बंदी के रूप में रहना पड़ता है और परिवार के बिछोह तथा घर की सुख-सुविधा से वंचित रहने की यंत्रणा एक निश्चित अवधि तक सहनी पड़ती है। परंतु भीतर तो प्रतिक्षण अपराध पनप रहा है और प्रतिक्षण भीतर-ही-भीतर सजा भुगती जा रही है। अपने ही अज्ञान के कारण अंतर्मन में एक ऐसा स्वभाव बना लिया गया है जो कि राग-द्वेष की प्रतिक्रिया करता ही रहता है। इस स्वभाव-शिकंजे में सब-के-सब केवल जकड़े हुए ही नहीं हैं, बल्कि इसे क्षण-प्रतिक्षण दृढ़ से दृढ़तर बनाये जा रहे हैं। इस आत्म-निर्मित गिरफ्तारी से कैसे मुक्त हों? इस स्वजनित दुःख से कैसे छुटकारा पायें? विपश्यना के अतिरिक्त अन्य कोई साधन नहीं जो इन गहराइयों तक आबद्ध इस घातक स्वभाव-शिकंजे का भंजन कर सके। चाहे जेल में हों या जेल के बाहर, हर व्यक्ति को इस आंतरिक कैद से मुक्त होना चाहिए। अतः इस वास्तविक मुक्ति के 'विपश्यना-पथ' पर सजग रह कर गंभीरतापूर्वक चलते रहना चाहिए। इसी में सब का मंगल है, इसी में सब का कल्याण है।"

ब्रह्मदेश से भारतवर्ष में कल्याणमित्र गोयन्काजी का आगमन सन १९६९ में हुआ। उस समय इस देश में 'विपश्यना साधना' के बारे में हर कोई अनजान था, क्योंकि यह पिछले लगभग २,००० वर्षों से लोगों की नासमझी के कारण भारत से लुप्त हो चुकी थी।

श्री गोयन्काजी ने इस साधना का प्रथम शिविर मुंबई में दिनांक ३.७.१९६९ को लगा कर इसको पुनर्जीवित किया। इसके उपरांत तो इसके विलक्षण प्रभावों के कारण भारत के विभिन्न प्रदेशों से इन शिविरों की मांग होने लगी और शिविरों का तांता ही लग गया। अंततोगत्वा जेल में भी

शिविर लगने का प्रसंग उपस्थित हुआ। यह शिविर केंद्रीय कारागृह, जयपुर में सन १९७५ में लगा जिसमें ११४ बंदियों ने भाग लिया। अनेक प्रारंभिक कठिनाइयों के बावजूद यह शिविर एक ऐतिहासिक शिविर सिद्ध हुआ जिसका उल्लेख, वस्तुतः, विश्वविख्यात 'गिनीज बुक आफ रिकार्डस (Guinness Book of Records)' में होना चाहिए था। इस पुस्तक में चुन-चुन कर उन घटनाओं को स्थान दिया जाता है जो विश्वभर में अनूठी पायी गयी हों। इस शिविर का अनूठापन इस बात में था कि दिन-रात प्रतिशोध की आग में जलने वाले कितने ही हत्यारे जो आजीवन कारावास भुगत रहे थे शिविर पूरा होते-होते भीतर से एकदम बदल गये। उनमें से कितनों के ही उद्गार इस पुस्तक के पट (३) में प्रस्तुत किये गये हैं। इन्हें पढ़ने से संत कबीर की यह वाणी स्मरण हो आती है -

"पहले यह मन काग था, करता जीवन घात।
अब तो मन हंसा भया, मोती चुनि चुनि खात॥"

यही नहीं, सदियों पुराने मुहावरे और लोकोक्तियां भी गलत सिद्ध हो गयीं। यथा -

'लातों के भूत बातों से नहीं मानते।'

Once a knave, always a knave
(बदमाश हमेशा बदमाश ही बना रहेगा।)

Once a junkee, always a junkee
(नशा करने वाला हमेशा नशई ही बना रहेगा।)

Old habits die hard
(पुरानी आदतें मुश्किल से छूट पाती हैं।)